IJAER/ Jan-Feb 2022/Volume-11/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

मीरा तथा रसखान के कृष्ण-भक्ति का तुलनात्मक अध्यन

हिरेन्द्र देवांगन , गायत्री

अंडरग्रेजुएट स्टूडेंट , बैचलर ऑफ़ आर्ट्स

रुंगटा कॉलेज ऑफ़ साइंस एंड टेक्नोलॉजी

शोध निर्देशक - श्रीमती नीति खरे

कला विभाग प्रमुख

रुंगटा कॉलेज ऑफ़ साइंस एंड टेक्नोलॉजी

शोधसार

"कृष्ण" सभी प्राणियों में उदात्त भावना, कर्त्तव्यपरायणता, जीवन के सभी पक्षों में सुदृढ़ आधार प्रदान करने, अपने प्रेम एवं सौन्दर्य में आबद्ध कर परमानंद प्रदान करनेवाले परब्रह्म हैं। कृष्ण के नाम, गुण एवं रूप की महिमा अपरम्पार है। विविध नामों से अभिहित किये जानेवाले श्रीकृष्ण का प्रत्येक नाम उनके द्वारा भक्त-उद्धार, भक्तवत्सलता, शत्रुता-त्राण, अपने भक्तों को भयमुक्त कर आनंद प्रदान करने, लोकरंजनकारी लीलाओं के माध्यम से परम रस का अनुभव प्रदान करनेवाले स्वरूप को अभिव्यक्त करता है।कृष्ण-भक्ति का पूर्ण विकास, उनके ईश्वरीय स्वरूप, विष्णु से अभिन्नता, उनकी पूजा-अर्चना, माहात्म्य, रसिकेश्वर, लीलाधारी, परब्रह्मस्वरूप, माधुर्य एवं ऐश्वर्य स्वरूप का पूर्ण परिपाक पुराण-साहित्य में मिलता है।कालान्तर में कृष्ण की सौन्दर्यमयी यमर्या प्रेमलीलाएँ, उनकी भक्ति-भावना में विकसित होती चली गईं। मध्यकाल में अनेक वैष्णव सम्प्रदायों की स्थापना हुई, जिनके आराध्य देव विष्णु-अवतार कृष्ण रहे हैं। श्रीकृष्ण की भक्त-उद्धारक लीलाओं के साथ उनके केशोर्य रूप, सौन्दर्य, प्रेमपरक लीलाओं का वर्णन अधिक हुआ हे।अतिरिक्त अनेक भक्तों ने स्वतन्त्र रूप से कृष्ण-भक्ति के उद्गार अभिव्यक्त किये हैं, जिनमें मीरां, रसखान, नरोत्तमदास ,रहीम आदि उल्लेखनीय हैं। इस शोध पत्र में हम मीरा तथा रसखान के कृष्ण भक्ति गीतों का तुलनात्मक अध्यन करेंगे1

प्रस्तावना

प्रेम रस के देवता श्रीकृष्ण ने अपनी सुन्दर छवि से मीरां तथा रसखान को अपने प्रेम-सूत्र में आबद्ध कर लिया। जहाँ मीरां स्वयं को कृष्ण की चेरी, चिर सुहागिनी मानकर जीवन-पर्यत कृष्ण-साधना करती रहीं, वहीं रसखान अपना जीवन कृष्ण-भक्ति करते हुए व्यतीत कर देते हैं। दोनों ही भक्त कवियों ने स्वच्छद रूप से कृष्ण-प्रेम का आनंद उठाते हुए अमरता को प्राप्त कर लिया। समन्वित विवेचन कृष्णानुरागिनी मीरां कृष्ण के प्रेम का संबल पाकर सदैव के लिए अमर हो गई। मीरां की ख्याति तत्कालीन समाज में फैलने लगी थी। उनका व्यक्तित्व स्वयं में इतना भास्वर हो गया था कि देश का बादशाह भी उन्हें देखने के लिए आता था। तत्कालीन साधु-सन्तों में मीरां का नाम बहुत सम्मानपूर्वक लिया जाता था। मध्यकाल में कवसयित्रियों की विशेष परम्परा नहीं थी। अत: मीरां ने इस दृष्टि से स्त्री-नेतृत्व भी किया है। आधुनिक युग में स्त्री-विमर्श की बहुत चर्चा होती है पर यदि ध्यान से देख जाये तो इसकी शुरुआत मध्यकाल से ही हो गई थी। यद्यपि मीरां ने अनेक रचनाएँ

नहीं लिखीं, परन्तु उनके भक्तिपरक पद गेय होने के कारण आज भी भजन मण्डलियों में प्रेम से गाये जाते हैं जो उनकी लोकप्रियता का प्रमाण है। इन पदों में दार्शनिकता, भक्ति-भाव, प्रेम की पराकाष्ठा, अनन्यता इत्यादि दर्शनीय हैं। मीरां ने श्रीकृष्ण की प्रेयसी होने के कारण आजीवन कृष्ण-भक्ति के संबल को दृढ़ता से पकड़े रखा। विविध षड्यन्त्रों के माध्यम से मीरां की भक्ति की परीक्षा होती रही। सच्ची भक्ति के कारण मीरां इन सबसे पार पाती हुई कृष्ण के चरणों में सदैव के लिए समर्पित हो गईं। मीरां ने अपने दृढ़ व्यक्तित्व से पुरुषसत्तात्मक समाज को चुनौती दी एवं नारी-समाज को एक नई दिशा प्रदान की । साथ ही एकनिष्ठ भाव से प्रेम एवं भक्ति को भी अभिव्यक्त किया। मीरां के समान प्रेम हो जाने पर प्रत्येक जीव आवागमन के चक्र से मुक्त हो सकता है। मीरां एवं रसखान के भक्तिपरक पद भक्त-गणों में साहस, उत्साह भरने के साथ-साथ कृष्ण-अनुराग उत्पन्न करने में पूर्ण समर्थ हैं।

रसखान प्रेमी हृदय, स्वच्छंद प्रवृत्ति, एकनिष्ठ, आस्थायुकत, साम्प्रदायिकता से मुक्त स्वभाववाले व्यक्ति थे। वह भक्तिकालीन एवं रीतिकालीन परिस्थितियों से प्रभावित हें क्योंकि उनके समय में भक्ति के साथ रीतिकालीन श्रृंगारिक रचनायें भी रची जा रही थीं। रसखान के काव्य में तत्कालीन भक्त कवियों की कविता के समान दरबारी काव्य के स्वर भी मिल जाते हैं जो समकालीन प्रभाव को व्यक्त करते हैं। जेसाकि रसखान के काव्य-विषय से ज्ञात होता है कि रसखान किसी सम्प्रदाय-विशेष से पूर्णतः बँधे नहीं रहे, परन्तु बल्लभ सम्प्रदाय का उन पर प्रभाव अवश्य था। रसखान के पदों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि रसखान ने बल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित होने के पश्चात् भी कृष्ण-भक्ति स्वच्छंद रूप से की हे। वैष्णव सम्प्रदाय एवं इस्लामी प्रभाव के होते हुए भी उन्हें किसी एक मत से बाँधना उनके साथ अन्याय होगा। अपने इष्ट के प्रेम-भाव में डूबकर उन्हें जो अच्छा लगा, वही किया। अपनी कृष्ण-भक्ति के कारण 'रस की खान' रसखान हिन्दू-मुस्लिम-वैमनस्थ के बीच एक ताजा हवा का झोंका प्रमाणित हुए। इनकी अनन्य भक्त पूर्णतः कृष्ण को समर्पित थी। वह केवल कृष्ण के स्वरूप के प्रति ही नहीं अपितु उनके निवास स्थान ब्रज के प्रति भी बहुत ही “नॉस्टेलजिक' हैं। वह तो पत्थर, लता, यमुना, पशु-पक्षी इत्यादि का भी रूप लेने को तैयार हैं। राजसी वैभव एवं सुख को त्यागकर रसखान ने भी कृष्ण के प्रति एकनिष्ठ समर्पण किया। मीरां यदि नारी होने के कारण कृष्ण को पति मानकर राजघराने में विद्रोहिणी कहलाई तो, रसखान ने मुस्लिम होकर भी हिन्दू देवी-देवताओं के प्रति श्रद्धा व्यक्त करके स्वयं में विशिष्टता का परिचय दिया है। रसखान की प्रेमा-भक्ति हृदय-तत्त्व पर आधारित है जो अपनी मौलिकता लिये हुए है, उसे किसी सम्प्रदाय-विशेष से जोड़ना अथवा सांप्रदायिक घेरे में खड़ा करना उसके साथ अन्याय होगा। तत्कालीन समय की धार्मिक सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं साँस्कृतिक परिस्थितियों ने मीरां तथा रसखान के व्यक्तित्व पर प्रभाव डाला क्योंकि अपने परिवेश के प्रभाव से कोई भी रचनाकार पृथक् नहीं रह सकता है। अतः युगीन परिवेश जहाँ रचनाकार के व्यक्तित्व एवं काव्य को प्रभावित करता है, वहीं वह उसके काव्य के माध्यम से अभिव्यक्ति भी पाता है। मीरां के काव्य में उन धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक परिस्थितियों का बोध होता है जिन्होंने मीरां को प्रभावित किया। मीरां में निर्गुण सन्तों की विशेषताएँ बहुलता से प्राप्त होती हैं परन्तु फिर भी मीरां के आराध्य श्रीकृष्ण सगुणस्वरूप हैं, जिसकी अभिव्यक्ति मीरां के अनेक पदों में मिलती है। इस प्रकार मीरां एवं रसखान अपने समय की परिस्थितियों से प्रभावित थे, परन्तु इससे उनकी कृष्ण-भक्ति की स्वतन्त्र प्रवृत्ति बाधित नहीं हुई, अपितु निरन्तर प्रगाढ़ता को प्राप्त होती गई।

मीरां एवं रसखान के आराध्य का स्वरूप

मीरां तथा रसखान के आशध्य श्रीकृष्ण परम सौन्दर्य के अक्षय भण्डार हैं। इन्हीं सौन्दर्यशाली श्रीकृष्ण ने सभी भक्तों को अपने मोहिनी रूप से अपने प्रेमपाश में बाँध लिया है। मीरां के काव्य में कृष्ण निर्गुण-निराकार, अविनाशी प्रियतम हैं। मीरां उनकी जन्म-जन्म की दासी हैं। यहाँ कृष्ण निर्गुण होने के साथ-साथ सगुण-साकार रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। कृष्ण दर्शनों की अभिलाषी मीरां वन-वन घूमती हैं, तो कभी उनकी प्रतीक्षा में विरह ज्वाला में जलती हैं। वह जोगी प्रियतम जब से मुख मोड़ कर गया है मीरां को पल भर भी चैन नहीं है। मीरां तथा रसखान ने कृष्ण के सौन्दर्याकन में परम्परा का निर्वाह किया है। मौलिकता उनकी प्रेमाभक्ति में हे, जो हर क्षण नवीन प्रेम-उद्भावना को जन्म देती है। बार-बार प्रेम की रूपराशि में बँधने एवं प्रेमी बनने को बाध्य करती है। कृष्ण की लीलाएँ आनंदप्रद हें। सभी को परमानंद का अनुभव कराती हैं। कृष्ण की लीलाओं के वर्णन में मीरां की अपेक्षा रसखान का मन अधिक रमा है 1

रसखान के पदों में कृष्ण-सोन्दर्य कूट-कूट कर भरा हुआ है। उन्होंने अपनी पैनी दृष्टि से श्रीकृष्ण के प्रत्येक अंग एवं आभूषणों का वर्णन बड़ी तल्लीनता से किया है। मीरां की दृष्टि रूप-सौन्दर्य से अधिक गुण-सौन्दर्य पर रही है, उन्हें अपने गिरधर गोपाल पर पूर्ण विश्वास है। भक्तवत्सल कृष्ण ही मीरां के पति हैं। मीरां अपनी बाल्यावस्था में कृष्ण की मूर्त्ति पर रीझ गई और उनकी यही रीझ युवावस्था में प्रमोद-प्रेम में परिवर्तित हो गई। रसखान भी श्रीकृष्ण के मधुर रूप से आकृष्ट हें। उन्होंने गदर के समय बड़ी विपत्तियाँ सही थी। भौतिक संपदा से उन्हें विरक्ति हो चली थी। रसखान को मुस्लिम धर्म में ऐसा कोई आकर्षण अथवा भक्ति दिखाई नहीं दी, जैसी कृष्ण या उनकी छवि से प्राप्त हुई। रसखान का मन श्रीकृष्ण का मधुर और दृढ़ अवलम्ब पाकर उन्हीं में रमा रहा। कृष्ण में और जो गुण थे, वे तो थे ही, किन्तु उनकी मधुर मूर्ति और आनंदकारिणी छवि सर्वोपरि थी। प्रथम और प्रधान आकर्षण तो उनकी छवि में ही था, जिसकी ओर मन खिंचा चला जाता है। रसखान की गोपियाँ कृष्ण के रूप-सौन्दर्य पर आसकत हें। मीरां के प्रेमी कृष्ण का जोगी रूप भी है। यहाँ वस्त्राभूषणों का कोई महत्त्व नहीं है। रसखान के काव्य में यह जोगी रूप नहीं मिलता। मीरां के साथ रसखान की गोपियों ने लोक-लाज को पूर्णतः त्याग दिया है। वे केवल कृष्ण दर्शन की अभिलाषी हैं इसी कारण वे वन-वन घूमती हैं। दोनों कृष्ण-भक्त कवियों के काव्य में कृष्ण के रूप का सोन्दर्याकन इतना सजीव और साकार है, जिसे पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि मीरां तथा रसखान के समक्ष कृष्ण प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित हों।

मीरा अवं रसखान के आराध्य की लीलाओं का तुलनात्मक अध्यन

1. लीला से अभिप्राय

लीला का सामान्य अर्थ क्रीड़ा, केलि, विहार, खेलना आदि शब्दों से लिया जाता है।' वास्तव में “लीला से अभिप्राय ईश्वर की उस गति से है, जो परमात्म प्रभु के खेल रूप में वर्णित है। उस परात्पर ब्रह्म की लीला ही संसार के नियामक एवं संहारक तत्त्व के मूल में सन्निहित है। एक ओर, वह नए-नए वपुरूपों में अंशीभाव का उद्भास कराता है तो दूसरी ओर वह कृशकाय से मुक्ति रूप में अक्षर ब्रह्म का बोध कराता है।' कृष्ण-चरित से संबंधित अनेक लीलाओं का दिग्दर्शन प्राय: सभी कृष्ण-भक्त कवियों के साहित्य में सहज ही उपलब्ध होता है। कृष्ण की समग्र लीला आनन्द का स्रोत है। वह एक कुशल लीलाधारी हैं। उनके रहस्य को समझनेवाला ही सच्चे आनंद का अनुभव करता है। यही अनुभव कृष्ण-भक्त कवियों ने किया। इसीलिए उनके साहित्य में कृष्ण लीलाओं से संबंधित प्रसंग बहुत मनोमुग्धकारी रूप में चित्रित हैं। लीला का अर्थ है- 'हरिलीला'। इसे प्रभु का खेल' भी कहा जाता है। वस्तुत: सम्पूर्ण सृष्टि ही प्रभु-क्रीड़ा-रूप हे। वास्तव में ब्रह्म आनन्दमय हैं एवं लीला उनकी आनन्दमयी अभिव्यक्ति। “तैत्तरीयोपनिषद् में यदि सृष्टि को ईश्वर की एक से अनेक होने की कामना का सुपरिणाम कहा तो बृहदारण्यक में माना गया कि यह आत्मा (परमात्मा का अंश) ही पहले पुरुष-जेसा था। उसने दृष्टि दौड़ाई,

परन्तु अपने से भिन्न किसी को न देख पाया। 'सोडहं', यह पहले कहा, अत: "अहं" नामधारी हुआ। तब दूसरे की चाह की। फिर आत्म शरीर के दो भाग किए, जो पति और पत्नी कहलाए।'"

श्रीकृष्ण-चरित् में लीलाओं का विशिष्ट महत्त्व है। "वे भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए, साधन-निरपेक्ष मुक्ति प्रदान करने के लिए अवतार लेते हैं। उनका कार्य भी लीला है। भक्तों के भावानुसार वे उन्हें बाल, पौगण्ड, किशोर और युवक किसी भी रूप में प्राप्त हो सकते हैं, किन्तु रूप ही वरेण्य है। किशोर काल की उनकी कुंजलीला और निकुंज नाम की लीलाओं में से कुंजलीला अवतार काल की है जिसमें पृथ्वी पर ब्रजभूमि में गोपांगनगाओं के साथ विहार करते हें।'" बाल्यकाल से ही कृष्ण ने अनेक चमत्कारपूर्ण कार्य किए थे। मीरां कृष्ण के ब्रजवासी होने एवं उनकी लीलाओं से ब्रजवासियों के आनंदित होने का वर्णन करते हुए कहती हैं:-

म्हारो गोकुल रो ब्रजवासी।

ब्रजलीला लख जग सुख पावाँ, ब्रजवणताँ सुखरासी।

णाच्याँ गावाँ ताल वज्यावाँ, पावाँ आणँद हाँसी।

णन्द जसोदा पुत्र री प्रगदयाँ, प्रभु अविनासी॥

मीरां एवं रसखान दोनों ही कृष्ण-प्रेमी थे। अतः प्रेम का वर्णन तो इनके काव्य में बहुश: आया है। मीरां के काव्य में कृष्ण-लीला के बहुत कम पद हैं, जबकि रसखान ने कृष्ण के बाल्यकाल में गोपलीला, दधिलीला, दानलीला, वृन्दावन से सम्बन्धित लीलाएँ, कुंज-क्रीड़ा, रासलीला आदि का बारम्बार वर्णन किया है। रसखान ने कृष्ण को आराध्य मानकर स्वच्छंद रूप से मनोरम अनुभूतियों की व्यंजना की। उनका लीला-वर्णन भी परम्परा-मुक्त ही था। कृष्ण के लौकिक-अलौकिक दोनों ही रूपों का वर्णन इन्होंने किया। कृष्ण की बाल-लीलाओं में जेल में जन्म, मथुरा से ब्रजागमन, पूतना-वध, यशोदा को मुख खोलकर सर्वदेव-दर्शन देना, ऊखल-बन्धन, वन में धेनुकासुर का वध, बवण्डर रूपी राक्षत का वध, कालिय नाग-मर्दन आदि प्रमुख लीलाएँ आती हैं। रसखान ने अनेक लीलाओं की चर्चा की है। हम सुविधानुसार इन्हें वृन्दावन लीला एवं गोपियों के साथ की गई लीलाएँ (पनघट, दधि, कुंज, रास आदि) इन दो श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं।

2. वृन्दावन लीला

भक्ति की दृष्टि से भक्त का हृदय-स्थल ही वृन्दावन है। ईश्वर यहाँ विविध लीलाएँ करते हैं और अपने भक्तों से मिलते हैं। वृन्दावन का स्वरूप वेद, पुराण एवं संहिताओं में वर्णित है। कृष्ण-भक्त कवियों ने वृन्दावन को पर्याप्त महत्त्व दिया है। रासलीला प्रसंग में वृन्दावन का उल्लेख अधिक आया हे। डॉ. जगदीश भारद्वाज ने वेष्णव सम्प्रदायों में वृन्दावन तत्त्व-चिन्तन के विषय में लिखा है "इस योजना में वृन्दावन गोलोक का एक विशेष भाग है और रासलीला और अप्रकट लीला के भेद से वृन्दावन के दो रूप माने गये हैं- एक भू वृन्दावन और दूसरा त्रिपाद विभूतिस्थ अथवा गोलोकस्थ वृन्दावन और दोनों का अभेद प्रतिपादित किया गया है।'"

मीरां कृष्ण की लीलाओं का गान वृन्दावन की कुंज गलिन में करना चाहती हैं, जहाँ श्रीकृष्ण ने गौएँ चराई तथा मुरली बजाई थी::-

बिन्द्रावन री कुँज गलिन माँ गोविन्द लीला गास्यूँ।

वृन्दावन की कुंज गलियों में श्रीकृष्ण नाचते-गाते रहते थे:-

बिन्द्रावन की कुंज गलिन में, नाचत नन्दकिसोरा

श्रीकृष्ण की लीला-स्थली के प्रति दोनों कवियों का विशेष झुकाव रहा, इसी कारण अपने जीवन के उत्तरार्द्धकाल में वृन्दावन में रहकर रसखान ने कृष्ण-भक्ति की तथा उसके पास के क्षेत्र में ही बेकुण्ठवासी हुए। मीरां को वृन्दावन बहुत अच्छा लगता है। यहाँ हर घर में तुलसी का पौधा है। हर घर में ठाकुर की पूजा होती है। श्रीकृष्ण जी का दर्शन भी नित्यप्रति यहाँ मिलता है। यमुना का स्वच्छ जल, दही का भोजन, वृन्दावन में खूब मिलता है। कृष्ण रत्नजड़त सिंहासन पर सुशोभित होते हैं। वृन्दावन की हर एक लता-कांज में श्रीकृष्ण की मुरली का स्वर सुनाई पड़ता है। मीरां कहती हैं कि गिरधर नागर प्रभु के नाम का भजन करने से प्रत्येक वृन्दावनवासी का जीवन सरस और भक्तिमय है:-

आली म्हाणे लागा वृन्दावण नीकाँ॥

घर-घर तुलसी ठाकुर पूजा, दरसण गोविन्दजी काँ

निरमल नीर बह्याँ जमणा माँ, भोजन दूध दह्याँ काँ।

रतण सिंहासण आप विराज्याँ, मुगट धरयाँ तुलसी काँ।

अतः मीरां श्रीकृष्ण के लीलाधाम वृन्दावन के प्रति पूर्णतः विश्वस्त थीं। इसलिए उन्होंने स्वयं वृन्दावन की यात्रा की। यमुना नदी का महत्त्व किसी से भी नहीं छिपा है। श्रीकृष्ण का सान्िध्य पाकर यह अमर हो गई। मीरां स्वयं अपने मन को यमुना के किनारे चलने के लिए कहती हैं। यमुना का जल अत्यन्त स्वच्छ है। उसमें स्नान करने से शरीर शीतलता प्राप्त करता है एवं यमुना के तट पर श्रीकृष्ण बलराम के साथ बाँसुरी बजाते रहते हैं:-

चालाँ मण वा जमण काँ तीर॥

वा जमणा का निरमल पाणी, सीतल होयाँ सरीर।

बंसी बजाँवा कान्हाँ, संग लियाँ बलवीर।

मीराँ रे प्रभु गिरधर नागर, क्रीड्यां संग बलवीर॥

3, गोपियों के संग की गई विविध लीलाएँ कृष्ण के द्वारा की गई लीलाएँ भक्तों की आनंद-प्राप्ति का हेतु रही हैं। ब्रज की विभिन्न लीलाओं को देखकर ब्रजवासी सुख पाते हैं:-

ब्रजलीला लख जण सुख पावाँ, ब्रजवणताँ सुखरासी।

दधिलीला

मीरां ने कृष्ण द्वारा दही खाने, मटकी फोड़ने-संबंधी दही लीला का वर्णन किया है। एक गोपी कृष्ण को उपालम्भ दे रही है कि वृन्दावन की कुंज गलियों में तुमने मेरा हाथ पकड़ लिया, दही खा लिया और मटकी को फोड़ दिया। मीरां कहती हैं कि गोपियाँ सदा ही गोकुल में आती-जाती थीं परन्तु इससे पहले श्रीकृष्ण ने कभी भी ऐसा दान नहीं लिया था;-

बिन्द्रावन की कुंज गलिन में, गहे लीणो म्हारो हाथ।

दथि मेरा खायो, मटकिया, फोरी लीणो भुज भर साथ।

लपट झपट मोरी गागर पटकी, साँवरे सलौने गात।

कबहूँ न दान लियो मनमोहन सदा गोकुल आत जाता'

गोपियाँ कृष्ण-प्रेम में इतनी भाव-विभोर हो गई हैं कि "दही ले लो" के स्थान पर "श्याम मनोहर ले लो' कहती जा रही थीं। वे दही का नाम भूल गईं और 'हरि ले लो' "हरि ले लो' का उच्चारण करने लगीं। अतः गोपी बिना मोल की ही दासी बन गई;-

कोई स्यथाम मनोहर ल्योरी सिरे धरे मटकिया डोलै।

दधि को नाँव बिसर गई ग्वालन, हरिल्यो, हरिल्यो', बौलै।

मीराँ के प्रभु गिरधर नागर, चेरी भई विण मोलै।

कृष्ण रूप छकी है ग्वालिन, औरहि औरे बोली

रसखान ने भी कृष्ण एवं गोपियों के ऐसे ही अनेक प्रसंगों को मुखरित किया है। कृष्ण बहुत ही शरारती एवं नटखट हैं। वह गोपियों के साथ छेड़छाड़ करते हैं, दही खाकर मटकी फोड़ देते हैं। गोपियों द्वारा यशोदा की कसम दिलाने पर भी वह उन्हें नहीं छोड़ते हैं:-

एक तैं एक लौं कानन मैं रहैं ढीठ सखा सब लीने कन्हाई।

आवत ही हो कहाँ लौं कहाँ कोउ कैसे सहै अति की अधिकाई।

खायौ दही मेरो भाजन फोरयो न छोड़त चीर विवाएँ बुहाई।

सौहँ जसोमति की रसखानि तैं भाग मरू करि छूटन पाई।

कृष्ण दही के बहाने गोपियों के प्रेम रस का पान करते हें एवं गोपियों को करातेहैं। दही माँगना तो उनका केवल बहाना है:-

आज महूँ दहि बेचन जात ही मोहन रोकि लियौ मग आयौ।

माँगत दान मैं आन लियौ सु कियौ निलजी रस-जोबन खायौ।

काह कहूँ सिगरी री बिथा रसखानि लियौ हँसि कै मुसकायौ।

पाले परी मैं अकेली लली, लला लाज लियौ सु कियौ मनभायौ॥'

इस प्रकार की छेड़छाड़ का वर्णन करती हुई गोपी कहती हे;:-

छीर जौ चाहत चीर गेहँ अजू लेअ न केतिक छीर अचैहौ।

चाखन के मिस माखन माँगत खाउ न माखन केतिक खैहौ।

जानति हौं जिय की रसखानि सु काहे कौ एतिक बात बढ़ैहौ।

गोरस के मिस जो रस चाहत सो रस कान्हजू नेकु न पैहौ॥

3. रासलीला

"रास" शब्द लीला का प्रतीक माना गया है। 'रास' का अर्थ नृत्य से भी लिया जाता रहा है। पुराणों में रास का विस्तृत और सुन्दर वर्णन अनेकश: मिलता है। * श्रीमद्भागवत' को श्रीकृष्ण की भक्ति का आधारस्तम्भ माना गया है। यहाँ 'रास' शब्द का अर्थ अलौकिक रूप में लिया गया हे। श्रीकृष्ण दिव्यता से परिपूर्ण अजर, अमर, अविनाशी हैं और गोपियाँ भी परम रसमयी और सच्चिदानंदमयी ही हैं। गोपियों को प्रभु की अन्तरंग शक्तियाँ भी माना गया है। 'रासलीला' अर्थात् रसमय लीला। परमात्म भगवान् कृष्ण की अपनी आह्वादिनी शक्ति रूप, अपनी ही प्रतिमूर्त्ति से उत्पनन अपनी प्रतिबिम्ब-स्वरूप गोपियों से आत्म-क्रीडा। अपनी लीलाओं के विस्तार हेतु इस चराचर सृष्टि का निर्माण ब्रह्मस्वरूप श्रीकृष्ण ने किया है। उन्हें भक्तों को अपनी आनंदमयी लीलाओं के माध्यम से अनुगृहीत करना अधिक प्रिय रहा है। वास्तव में परमात्मा ने अपने द्वारा स्थापित सृष्टि एवं धर्म-मर्यादा की रक्षा के लिए दिव्य लीला-शरीर ग्रहण किया और उसके अनुरूप अनेक अद्भुत चरित्रों का अभिनय किया।' रासलीला के संबंध में सूरदास जी कहते हैं:-

रास-रस-रीति नहिं बरनि आवै।

कहाँ वैसी बुद्धि, कहाँ वह मन लहाँ, कहाँ यह चित जिय भ्रम भुलावै।

जो कहाँ, कौन माने, जो निगम-अगम-कृपा बिनु नहीँ या रसहिँ पावै।

भाव सौ भजे, बिन भाव मैं ये नहीं भावही माहिँ ध्यानहिँ बसावै।

रास का प्रभाव अत्यंत विलक्षण होता है। गोपी अपनी सुध-बुध भूल जाती है। बाँसुरी की ध्वनि सुनकर सारे शरीर में विष फैल जाता है, वह अचेत हो जाती है और इन सबसे बचने का एकमात्र उपाय है कि गोपी को कृष्ण की रासलीला में सम्मिलित होने को कहा जाये:-

देखत सेज बिछी ही अछी सु बिछी विष सो भिदि गौ सिगरे तन।

ऐसी अचेत गिरी नहिं चेत उपाय करे सिगरी सजनी जन।

बोली सयानी सखी रसखानि बचैं यौं सुनाइ कह्यौ जुवतीगन।

देखन कौं चलिये री चलौ सब, राम रच्यौ मनमोहन जू बना

रसखान ने रास लीला का वर्णन परम्परागत ढंग से किया है। श्रीकृष्ण की बाँसुरी की सुमधुर ध्वनि सुनकर गोपियाँ बैचन हो उठती हैं। अचेत होकर यत्नपूर्वक श्रीकृष्ण के ध्यान में लग जाती हैं। अब स्थिति यह हो गई है कि किसी अन्य का ध्यान नहीं रहता। शीघ्रता से अपने वस्त्रों को उलटा-सीधा पहनकर वन गईं, जहाँ सुन्दर रास रचनेवाले श्रीकृष्ण के साथ, सभी प्रेमभक्त गोपियाँ समूह बनाकर रासलीला में सम्मिलित थीं। एक गोपी रास रचाने का वर्णन करते हुए कहती हेः-

देखि कै रास महाबन को इक गोपबधू कह्नौ एक बधू पर।

देखति हो सखि मार से गोपकुमार बने जितने ब्रज-भू पर।

तीछें निहारि लखौ रसखानि सिँऽँगार करो किन कोऊ कछु पर।

फेरि फिरे आँखियाँ ठहराति हैं कारे पितंबरवारे के ऊपर॥'

साँवरे कृष्ण द्वारा रास लीला रचाने से गोपियाँ स्वयं के सौभाग्य पर प्रसन्न होती हुई कहती हैं कि श्रीकृष्ण की छवि द्विगुणित हो गई है, जिसे देखकर कोई भी मन और यौवन को कृष्ण पर न्योछावर किये बिना नहीं रह सकती। साथ ही गोपियाँ स्वयं के प्रण से झुकने को बाध्य हो गई हैंः-

आज भदू मुरली-बट के तट नंद के साँवरे रास रच्यौ री।

नैननि सैननि बैननि सौं नहिं कोऊ मनोहर भाव बच्यौ री।

जद्यपि राखन कौ कुल-कानि सबै ब्रजबालन प्रान पच्यौ री।

तद्यापि वा रसखानि के हाथ बिकनि काँ अंत पै लच्यौ री॥

4.होली-प्रसंग

कृष्ण भक्ति साहित्य में कृष्ण-चरित से संबंधित होली-प्रसंग का वर्णन विशेष रूप से हुआ हे। लीलामयी कृष्ण की विभिन्न लीलाओं की भाँति होली से संबंधित लीलाएँ भी अत्यन्त मनोमुग्धकारी रही हैं, जिनका प्रभाव वर्तमान समय तक वृन्दावन (ब्रज) में देखा जा सकता है। होली ब्रज का प्रसिद्ध त्यौहार है। ऐसे समय पर उल्लास और उमंग की लहर दौड़ने लगती है। सभी व्यक्ति इसे बडे प्रेम एवं आनंद के साथ मनाते हैं। प्राचीन साहित्य में भी इसका उल्लेख हुआ है। ब्रज के साथ-साथ भारत के अधिकतर प्रदेशों में इसे प्रतिवर्ष 'रंगों का त्यौहार' के रूप में फागुन मास में मनाया जाता है। मीरां को प्रेम एवं उमंग का त्यौहार पिया बिना खारा लगता है;-

होली पिया बिणा लागाँ री खारी।

अब मीरां किसके संग होली खेलें क्योंकि प्रियतम तो उसे अकेला छोड़कर चले गये हैं;-

'किण सँग खेलूँ होली, पिया तजि गये हैं अकेली।'

होली-प्रसंग में विरह भाव की अभिव्यक्ति के साथ संयोग पक्ष का भी वर्णन मिलता है। कृष्ण मुठ्ठी भर-भरकर सभी पर चन्दन, केसर डाल रहे हैं। सजे-धजे, छैल-छबीले कान्हा प्राण पियारी राधा के संग खेल रहे हैं। उनके फाग खेलने से पूरे ब्रज में रस की वर्षा हो रही हैः-

होरी खेलत हैं गिरधारी।

मुरली संग बजत डफ न्यारो, संग जुबति ब्रजनारी।

चन्दर केसर छिरकत मोहन अपने हाथ बिहारी।

भरि भरि मूठि गुलाल लाल चहूँ देत सबन पै डारी।

छैल छबीले नवल कान्ह संग स्यामा प्राण पियारी।

गावत चार धमार राग तह दे दे कर करतारी।

'फागु जु खेलत रसिक साँवरो बाढ्यो रस ब्रज भारी॥'

रसखान ने कृष्ण एवं गोपियों के फाग 'होली खेलने का' मनोहारी वर्णन किया है। सौभाग्यवती ब्रजबालाएँ कृष्ण के प्रेम को हृदय में धारण करके फाग खेल रही हें। वे कुंकुम और केसर तथा रंग भरी पिचकारी को भरकर कृष्ण के ऊपर गुलाल डाल रही हैं। फागुन के मास में सभी प्रेम-रंग में डूब जाते हैं। ब्रजमंडल में होली की धूम मची हुई है:-

'फागुन लाग्यौ सखी जब तैं तब ते ब्रजमंडल धूम मच्यौ हे।

नारि नवेली बचे नहिं एक बिसेख यहै सबै प्रेम अँच्यौ है।

होली खेलने के बहाने गोपियाँ कृष्ण के प्रेम का आनंद उठाती हैं:-

होरी भई के हरी भए लाल कै लाल गुलाल पगी ब्रजबाला।'

आज कृष्ण ने उनके अंग-प्रत्यंग को रँगकर काम भावना उत्पन्न कर दी है। विभिन्न प्रकार से रँगकर कृष्ण ने अपने प्रेम से सबको ललचा दिया है तथा होली के रंग के साथ प्रेम-सरस की धारा बरसा दी है।! वह अपनी पिचकारी चलाकर समस्त गोपियों को प्रेम रस से भिगोकर, अपनी आँखों को नचा गया है। होली के प्रसंग का अत्यंत सुन्दर वर्णन करते हुए आगे रसखान कहते हैं:-

लीने अबीर भरे पियका रसखानि खरो बहु भाय भरौ जु।

मार से गोपकुमार कुमार से देखत ध्यान टरौ न टरौ जू[।

निष्कर्ष

"कृष्ण-भक्ति" मीरां तथा रसखान के जीवन का साध्य रही है। मीरां ने जहाँ भक्ति को 'रसीली', "प्रेमाभक्ति' कहा है, वहीं रसखान ने प्रेम के भेदों के माध्यम सेइसे शुद्धा अथवा अशुद्धा, दो प्रकार की कहा है। मीरां तथा रसखान की भक्ति का स्वरूप माधुर्य, रागात्मक अथवा प्रेमाभक्ति का रहा है। कृष्ण-प्रेम मीरां को जीवन की संघर्षपूर्ण

परिस्थितियों से उबरने, कृष्ण का अनन्य भक्त बनाने में सहायक रहा है 1 रसखान कृष्ण-प्रेम के कारण वृन्दावन आकर कृष्ण की प्रेम लीलाओं तथा सौन्दर्य के चित्र अंकित कर स्वयं को आनंदित करते रहे। उनकी आनंदमयी रचनाएँ अन्य भक्तगणों को प्रेम की अनुभूति करवाती रही हैं। प्रेम दोनों आलोच्य कवियों की भक्ति का प्राण रहा है। कृष्ण की शरण में स्वयं को सुरक्षित पाकर मीरां तथा रसखान दोनों धन्य हो गये। भक्ति की प्राप्ति के अनेक साधनों का उल्लेख मीरां ने कुछ अधिक तथा रसखान ने कम मात्रा में किया हे। भक्ति स्वयं में साध्य तथा साधन दोनों है। भक्त ईश्वर-भक्ति कर प्रभु-प्रेम को प्राप्त कर लेना चाहता है। यही प्रेम उसके जीवन का मूल मन्त्र बन जाता है, जिसे वह कभी नहीं छोड़ता। मीरां कृष्ण की जन्म-जन्म की संगिनी हें, वहीं रसखान प्रत्येक योनि में कृष्ण तथा कृष्ण-संसर्ग की वस्तुओं के साथ रहना चाहते हैं। इनका यही भाव दोनों भकत-कवियों की कृष्ण के प्रति अनन्य, एकनिष्ठ भक्ति को दर्शाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

मध्यकालीन हिन्दी काव्य में भारतीय संस्कृति, डॉ. मदन गोपाल गुप्त, पृ. 63

भक्तिकाव्य की भूमिका, डॉ. प्रेमशंकर, पृ. 54

सुजान रसखानि, सं. विश्वनाथप्रसाद मिश्र, पद 95

श्रीमद्भागवत, 0/90/49

मीराँबाई की पदावली, सं. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद ॥77

हिन्दी -संस्कृत-कोश :, डॉ. रामसरूप (रसिकेश), पृ. 528

"मध्ययुगीन हिन्दी काव्य में कृष्ण-चेतना", डॉ. मनोज मोहन शास्त्री, पृ. 58

भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य, डॉ. मैनेजर पाण्डेय, पृ. 96

कृष्ण-भक्ति-काव्य की परम्परा और रसखान, डॉ. चद्रलेखा सिंह, पृ. 2॥॥

मीराँबाई की पदावली, सं. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद 6

कृष्ण काव्य में लीला-वर्णन, डॉ. जगदीश भारद्वाज, पृ. 20॥

मीराँबाई की पदावली, सं. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद ॥54

वही, पद 464

मीराँबाई की पदावली, सं. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद 60

वही, पद 46॥

मीराँबाई की पदावली, सं. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद ॥76

वही, पद 478

सुजान रसखानि, सं. विश्वनाथप्रसाद मिश्र, पद 403

मीराँबाई की पदावली, सं. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद 69

सुजान रसखान, सं. विश्वनाथप्रसाद मिश्र, पद 27

श्रीमद्भागवत, 0/90/49

सूरसागर, सूरदास, 0/006

सुजान रसखानि, सं. विश्वनाथप्रसाद मिश्र, पद 33, 34

वही, पद, 35

मीराँबाई की पदावली, सं. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद 77

वही, पद 79